ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI:UPBIL04292, REG. No.: 561/2013-2014 Vol.-2, No.-2, **PP-87-90**,YEAR-2015

बुन्देलखण्ड क्षेत्र की कोल महिलाओं की आर्थिक स्थिति का एक समाजशास्त्रीय मूल्यांकन

❑ **डॉ0 निर्मला देवी**

सारांश— *अनेक विधाताओं से युक्त भारत एक विशाल देश है। जहाँ अनेक जातियों, धर्मों, मतों तथा सम्प्रदाय के लोग परस्पर सामंजस्यपूर्वक रहते हुए स्वयं के जीवन को सुखमय एवं उन्नत बनाने के प्रयास में लगे रहते हैं। यही वे लोग हैं जो समाज को एक विकसित अवस्था की ओर गतिशील किये हुये हैं। आज भारतीय समाज सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, प्रौद्योगिक विकास के नये–नये प्रतिमानों को छूने का प्रयास करता है। आज मानव समाज विकास के चरम पर खड़ा होकर परमाणु बम तथा मंगलग्रह, क्लीनिंग आदि की विकास यात्रा पूरी कर चका है। किन्तु इसी विकास का दूसरा अछूता पहलू आदिवासी तथा जनजातियाँ हैं। जो भारत की सम्पूर्ण जनसंख्या का 0.08 प्रतिशत (दशमलव आठ प्रतिशत) है। ये भारत का एक ऐसा समूह है जो विकास, सभ्यता एवं प्रगति के नये प्रकाश पुंज से कोसों दूर होकर आज भी आदिम स्तर पर ही अपना जीवन यापन कर रहा है। इन्हें विभिन्न नामों आदिम समाज, आदिवासी, वन्य जाति, गिरीजन, अनु0जनजाति आदि से पुकारा जाता है।*

फर्थ के अनुसार ''आर्थिक मानव विज्ञान प्रमुखतः सामाजिक सम्बन्धों के आर्थिक पहलुओं से सम्बन्ध है।'' अर्थ सामुदायिक जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है। जो सामाजिक व सांस्कृतिक संरचना के निर्माण में निर्णायक भूमिका निभाता है। अतः जनजाति का आर्थिक जीवन उसकी संस्कृति के महत्वपूर्ण लक्षण को समझने में सहायक है। आर्थिक जीवन मानव के भौतिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित है। भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति से सम्बन्धित क्रियायें आर्थिक जीवन का अंग होती है। जीवन यापन के लिये आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन करना, उनका वितरण व उपयोग करना हीजनजातियों की आर्थिक क्रियाओं का अपार व लक्ष्य होता है। यह क्रियाएँ जनजातियों के सम्पूर्ण पर्यावरणविशिष्टता भौगोलिक पर्यावरण से प्रभावित होती है। भौगोलिक पर्यावरण ही उनके सामाजिक पर्यावरण को प्रभावित करता है। उनकी आवश्यकताएँ प्राकृतिक पर्यावरण से अनुकूलन के संदर्भ में भी होता है। अर्थ व्यवस्था की दृष्टि में भारत में जनजाति समूहों का संतुलन विकार की अवस्था से लेकर औद्योगिक अवस्था तक की विभिन्न श्रेणियों में रखा जा सकता है। विभिन्न विद्वानों ने अर्थ व्यवस्था के आधार पर भारतीय जनजातियों को विभिन्न प्रकार से वर्गीकृत किया है। मोटे तौर पर जनजाति आर्थिक क्रिया–कलापों को निम्न भागों में विभक्त किया जा सकता है।

1. भोजन संग्रह, शिकार व मछली पकड़ना।
2. चारागाही
3. स्थान पर्वती कृषि
4. स्थाई कृषि
5. हथकरघा उद्योग तथा अन्य लघु उद्योग
6. व्यापार
7. कृषि औद्योगिक श्रमिक कार्य

वर्तमान समय में भारत में लगभग 90 प्रतिशत आदिवासी कृषि कार्यों में व्यस्त हैं, चाहे स्थानान्तरण कृषि हो अथवा स्थाई कृषि। बीहड़ प्रदेशों में जैसे–पर्वतीय एवं पठारी क्षेत्र की अनुपजाऊ क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों में वन्य पशु–पक्षियों का शिकार जीवन यापन के एक प्राथमिक स्रोत के रूप में रहा है। पुरुष द्वारा सम्पन्न किया जाता है, इसके लिये स्त्रियाँ अयोग्य मानी जाती है। इनके उपकरणों में कलात्मक अभिव्यक्ति के साथ–साथ अटूट विश्वास की झलक

प्रवक्ता, समाजशास्त्र, डॉ. भीमराव अम्बेडकर डिग्री कालेज, बांदा, (उ0प्र0) भारत

दिखाई देती है। देवी–देवताओं के प्रति आस्था तथा जादूई कृत्यों से सम्बन्ध अथवा उपयोगिता एवं सजावट का द्योतक है। जैसे–मणिपुर, त्रिपुरा, नागालैण्ड की जनजातियों एवं तोड़ा, जनजातियों में स्त्रियाँ रंग–बिरंगे वस्त्रों का निर्माण कर अपनी कलात्मक अभिरुचि का परिचय देती है। ट्राइवर वीमन इन इंडिया में प्रकाशित विमल कुमार गुप्ता ने अपने लेख में ट्राइवर इन नार्थ इण्डिया में मणिपुर तथा मेघालय की आदिवासी स्त्रियों के आर्थिक क्रिया–कलापों का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि मणिपुर के आदिवासी स्त्रियाँ व्यापार के क्षेत्र में ऐसी भूमिका निभाती हैं जिसका उदाहरण अन्यत्र मिलना कठिन है। उन्होंने इम्फाल के इम्मा मार्केट (Market of Motivè) का उदाहरण है। जहाँ व्यापार के क्षेत्र में लगभग 99 प्रतिशत स्त्रियाँ व्यस्त दिखाई देती है। पुरुष तो कभी–कभार इक्के–दुक्के ही दृष्टिगोचर होते हैं। मेघालय में तो समान सिर पर रखकर बेचने का कार्य भी प्रमुख रूप से स्त्रियाँ ही करती हैं। पाठा क्षेत्र की कोल महिलाओं की स्त्रियाँ पुरुषों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर कोल जनजाति की स्त्रियाँ लकड़ी बेच कर अपना खर्च वहन करती है। वे ट्रेन में लकड़ी लाद कर शहरों में जाकर बेचती हैं।

स्त्रियों की सम्पत्ति का अधिकार– आदिम समाजों व्यक्तिगत सम्पत्ति के विचार का आगमन पर्याप्त देवी से हुआ, आरम्भ में सम्पत्ति पर सामुदायिक स्वामित्व था। हिन्दू जातियों की स्त्रियों की भाँति ही है। मात्र उनके निजी वस्त्र एवं आभूषण ही उनकी सम्पत्ति के रूप हैं। आभूषण भी तलाक की स्थिति में उन्हें वर पक्ष वालों को लौटाने पड़ते हैं। स्त्रियों का सम्पत्ति पर सामान्य अधिकार सम्बंधी कानून वर्तमान समय तक आदिवासी समाज अप्रभावित ही बना हुआ है, यही स्थिति कोल आदिवासी महिलाओं की भी है।

आर्थिक संगठन– आज देश में गरीब उन्मूलन की अनेक योजनायें शासन–प्रशासन द्वारा संचालित हैं। लेकिन इन सारी योजनाओं का लाभ शोषित, पीड़ित एवं अति गरीब को नहीं मिल पा रहा है, परन्तु यहाँ के निवासी (आदिवासी कोल) आज भी दीन–हीन अवस्था में है। कोल एक आर्थिक संगठित होकर कार्य एवं निवास करते हैं। कोलों की आर्थिक स्थिति बहुत ही दयनीय है, किसी भी कोल के पास रहने के लिये आवास नहीं है। ग्रेनाइट उद्योग का काम करते हैं। क्रेसर मालिक के यहाँ तीन–तीन पीढियों से कार्य कररहे हैं। मजदूरी मात्र 70.00 रुपये से 80.00 रुपये तक दी जाती है। इसी मजदूरी में पूरे परिवार सहित कार्य कर रहे हैं।

पत्थर तोड़ने का कार्य – कोल पत्थर तोड़ने का कार्य करते है। इनकी मजदूरी 70.00 रुपये से 80.00 रुपये तक दी जाती है। इसी मजदूरी में पूरे परिवार का भरण–पोषण करते हैं। जब पैसा खर्च करने के लिये नहीं रहता तो अग्रिम धनराशि मालिक से ले लेते हैं जो प्रति माह की मजदूरी से कटवाते रहते है। उनके पास भविष्य के लिये खर्च नहीं बच पाता, जिससे उन लोगों की आर्थिक स्थिति खराब रहती है। कोल आदिवासी लोग प्रातः 8.00 बजे से लेकर शाम 6.00 बजे तक गिट्टी लादने, उतारने व तोड़ने का कार्य करते हैं। और 10–15 वर्ष के बालकों को भी साथ लेकर वे कार्य करने जाते हैं, इस कारण वे अशिक्षित रह जाते हैं। दिन–रात क्रेशर की धूल भी मजदूरों को खानी पड़ती है जिससे अनेक प्रकार की बीमारियाँ गाँव में बनी रहती है। कोल मजदूर के कई परिवार टी.बी. के शिकार हो जाते हैं। खाँसी, खून की उल्टी भी होती है। गरीबी, लाचारी तथा आर्थिक स्थिति बहुत दयनीय है, इसके कारण कार्य भी नहीं कर पाते हैं। बच्चों के भरण–पोषण व दवा कराने के लिये कर्ज लेना पड़ता है, जिससे वह कर्ज में डूबे रहते हैं। इस क्षेत्र में एक गाँव जो चित्रकूट के भरतकूप से शिवरामपुर की ओर जाने वाली मुख्य सड़क से लगभग तीन किमी. अन्दर की ओर पथरीली मार्ग पर नहर के किनारे डफाई पुरवा को देखने पर पता चला कि इस लाचारी के कारण कुछ कोल जाति के मजदूर अपने जीवन से भी हाथ धोना पड़ता है, जैसे–बडकू रैदास व राजेन्द्र आदि हैं। जेसे–कोल खदान एवं क्रेशर में दबकर मृत्यु को प्राप्त हो गये हैं और उनके परिवार की आर्थिक दशा बहुत ही दयनीय हो गयी है। राजकुमारी विकलांग हैं, जिसकी उम्र 20 साल है, उसके पिता संजय ने उसे चार–पाँच साल से छोड़ रखा है। कोल विधवा महिलाओं को विधवा पेंशन भी नहीं मिलती है। भोड़ी, जो 35 वर्ष की है उसके 11 बच्चे हैं। 9 बच्चों की शादी हो

गई है, 2 बच्चों की शादी अभी करनी है, उसके पास पेट भरने तक की ठीक से व्यवस्था नहीं हो पाती है। यदि कोल महिलायें बीमार पड़ जाती है तो उनके पास दवा कराने के लिये पैसा नहीं होता कि वे अपने बच्चों को दवा करा सकें। अतः उनकी आर्थिक स्थिति बहुत ही खराब है। सरकार की तरफ से भी उनको कुछ भी नहीं मिल पा रहा है। कोल जाति के लोगों को सरकारी आवास, नाली, बिजली आदि कई योजनाओं से वंचित रखा गया है। शासन–प्रशासन से कई बार गुहार लगाई, लेकिन आज तक सुना नहीं गया है। कोल आदिवासी अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये वन से लकड़ी काटना, बेंचना, पत्थरों की खदानों में काम करना, मछली पकड़ना, गाय–बकरियों को चराना, खेती करना आदि कार्य कोल आदिवासी लोग कर रहे हैं। कुछ कोलों को सरकारी आवास तो मिले है, लेकिन उन सरकार आवासों के साथ सुविधायें भी नहीं दी जाती है तथा शौचालय आदि की भी व्यवस्था नहीं की जाती है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इस समाज के लोगों की मूल समस्या अर्थात् उनकी मूलभूत आवश्यकता रोटी, कपड़ा और मकान पर प्रबल इच्छाशक्ति पूर्व युक्त स्तर पर कार्य किया जाय।

निष्कर्ष–

इक्कीसवीं सदी में भूमण्डलीयकरण के इस दौर में आज यह आवश्यक हो गया है कि सम्पूर्ण समाज को विकास की मुख्य धारा से जोड़ा जाय तथा सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक पिछड़ेपन, असंतुलन को दूर करने, स्वास्थ्य शिक्षा एव आर्थिक संसाधनों को सर्वसुलभ कराया जाय और यह तभी संभव है जब समाज का न्यूनतम व्यक्ति भी यह महसूस करे कि उनके ही सपनों का भारत है। अर्थात् भारत के विकास के हर एक चरण में इन पिछड़े व्यक्तियों को सहभागी बनाया जाय एवं सभी योजनायें निम्नतम व्यक्तियों को ध्यान में रखकर चयन किया जाय। संक्षेप में कोल आदिवासी विकास उन्नयन हेतु निम्न सुझाव दिये जाये–सरकारी, गैर सरकारी विभिन्न सामाजिक संगठनों के माध्यम से इस समाज में व्याप्त कुरीतियों, विसंगतियों के विरुद्ध व्यापक जन–जागरण एवं लोक शिक्षण के कार्यक्रमों को प्रोत्साहित किया जाय, प्राचीन रीति–रिवाजों तर्क संगत वैज्ञानिक विश्लेषण करते हुये समाज के समक्ष उनका सही रूप से प्रस्तुतीकरण किया जाये। इस समाज के उन्नयन के लिये व्यापक आर्थिक योजना तैयार किया जाय, क्योंकि अधिसंख्यक कोल परिवार भूमिहीन है। अतः इनके परिवारों को रोजगारपरक योजनाओं, स्वरोजगारपरक कुटीर उद्योग, हथकरघा उद्योग, सहकारीकृषि, पशुपालन आदि विषयों पर व्यापक कार्ययोजना तैयार किया जाना चाहिये। सरकार द्वारा चलायी जा रही विभिन्न रोजगारपरक ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना में इन्हें प्राथमिकतापूर्वक स्थान दिया जाना चाहिये। इन समाज के लोगों का वनस्पतियों सम्बंधी विशेष ज्ञान को चिकित्सीय मापदण्डों में तौलते हुए उनके ज्ञान का व्यापक उपयोग किया जाय। इस बात के लिये ठोस कार्य योजना बनाई जाय कि रोजगार एवं आर्थिक जरूरतों को पूरा करने के लिये माता–पिता के दिनभर घर से बाहर जाने की स्थिति में बच्चों की सही प्रकार से शिक्षा सुनिश्चित हो सके। महिलाओं की शिक्षा हेतु विशेष प्रयास किया जाना चाहिये क्योंकि शिक्षित एवं सुसंस्कृत माता ही सभ्य समाज एवं परिवार की आधारशिला होती है। इस समाज के लोगों तथा महिलाओं को उनके सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा कानूनी अधिकारों का व्यापक ज्ञान कराया जाना चाहिये ताकि उनका किसी भी स्तर पर शोषण आदि न किया जा सके। भारतीय संविधान के अनुच्छेद–21 ''जीवन जीने के अधिकार'' का व्यापक एवं साकार रूप इस समाज के लोगों को प्राप्त कराने हेतु ठोस क्रियान्वयन किया जाना चाहिये ताकि स्नेह सम्मान से वंचित उपेक्षित, दीनजन एवं जीवन जीने का सार्थक आधार खो चुके। दरिद्र, दलित वनवासियों के स्वाभिमान को जगाकर उनके निराश जीवन में चेतना का संचरण हो सके। अतः इन शब्दों के साथ भावी समाज निर्माण के बारे में इंगित करना भी सार्थक होगा। सभी लोग मिलकर प्रबल इच्छा के साथ ऐसे वर्गहीन समाज का निर्माण करें जिसमें सभी व्यक्तियों के मध्य वर्ग समरसता तथा बन्धुत्व का भाव दृष्टिगत होता हो तथा सभी एक साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर विकास के पथ पर अग्रसर हों।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गिलिन एण्ड गिलिन, कल्चरल सोशियोलॉजी,

पृ.सं.282
2. ई.ए.हावेल, मैन दन प्रिमिटिव वर्ल्ड, पृ.सं.513
3. डी.एन.मजूमदार, रेसेश एण्ड कल्चरस् ऑफ इण्डिया, पृ.सं. 93
4. चार्ल्स विनिक, डिक्शनरी ऑफ एन्थ्रोपोलॉजी, पृ.546
5. डॉ. अरुण कुमार सिंह, जनजाति समाज में स्त्रियाँ, पृ.सं. 10
6. चन्द्रभान राही, मध्यप्रदेश के आदिवासी एवं उनका रहन–सहन, पृ.सं.120

*****